IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

# स्वामी विवेकानंद के धर्म दर्शन की वैश्विक प्रासंगिकता: एक विश्लेषण

**संजीत कुमार गुप्ता**

दर्शनशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

लखनऊ, उत्तर प्रदेश

## शोध सार

यह शोधपत्र स्वामी विवेकानन्द की धर्म–दर्शन की संकल्पना का एक विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करता है, जिसमें वे धर्म को किसी एक संप्रदाय या मत से परे एक सार्वभौमिक मानव मूल्य के रूप में देखते हैं। विवेकानन्द का यह दृष्टिकोण धर्मों की विविधता को अस्वीकार नहीं करता, बल्कि उन्हें सत्य की विभिन्न अभिव्यक्तियाँ मानते हुए एक गहरे आध्यात्मिक एकत्व की ओर संकेत करता है। उनके विचार धार्मिक सहिष्णुता, अंतर्धार्मिक संवाद, तथा सभी मनुष्यों में निहित दिव्यता की स्वीकृति पर आधारित हैं।

इस शोध में विवेकानन्द द्वारा प्रस्तुत धर्म की अवधारणा को समकालीन वैश्विक चुनौतियों जैसे धार्मिक कट्टरता, सांस्कृतिक संघर्ष, सामाजिक विषमता, और नैतिक अधोपतन के संदर्भ में समझने का प्रयास किया गया है। उनके सिद्धांतों का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि कैसे वे आज की दुनिया में एक ऐसी नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि प्रदान करते हैं, जो मानवता के लिए प्रासंगिक एवं क्रांतिकारी दोनों है। स्वामी विवेकानन्द की शिक्षाओं का दूसरा प्रमुख पक्ष 'मानव सेवा' है, जिसे वे ईश्वर की सच्ची उपासना मानते हैं। यह शोध दर्शाता है कि 'नर सेवा ही नारायण सेवा' का उनका सिद्धांत किस प्रकार सामाजिक सेवा को धर्म और आध्यात्मिक साधना के साथ एकीकृत करता है। यह विचार आज के परिप्रेक्ष्य में विकासशील तथा विकसित देशों दोनों के लिए अत्यंत उपयोगी है, जहाँ सेवा कार्यों को केवल दान या परोपकार नहीं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व और नैतिक धर्म के रूप में देखा जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, शोधपत्र यह भी विश्लेषित करता है कि स्वामी विवेकानन्द की वैश्विक मंचों पर विशेषकर 1893 के शिकागो विश्व धर्म महासभा में दिया गया संदेश किस प्रकार भारतीय अध्यात्म की वैश्विक स्वीकृति का आधार बना और किस तरह उनके विचार आज भी पश्चिमी जगत में योग, ध्यान, और आध्यात्मिक सेवा के माध्यम से जीवंत हैं।

**मुख्य शब्द–** धर्म, वेदांत, मानव सेवा,

## परिचय–

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में भारतीय पुनर्जागरण के अधिष्ठाता के रूप में अवतरित हुए स्वामी विवेकानंद का धर्म–दर्शन केवल एक राष्ट्रीय स्वर ही नहीं था, बल्कि वह एक सार्वभौमिक आध्यात्मिक प्रतिमान था, जिसने पूर्व और पश्चिम के मध्य एक वैचारिक सेतु का निर्माण किया। विवेकानन्द का दर्शन नव्य वेदांत के रूप में जाना जाता है। इनके दर्शन में प्राचीन उपनिषदों तथा विज्ञान की तर्कशीलता का एक आधुनिक समावेश है। वर्तमान समय में जो धार्मिक कट्टरता वैचारिक मतभेद तथा अस्तित्वगत समस्याएं खड़ी हुई हैं, उसके लिए विवेकानंद का धर्म–दर्शन एक समाधानपरक रूपरेखा प्रस्तुत करता है, जो न केवल व्यक्तिगत बल्कि वैश्विक समस्या तथा शांति के लिए अत्यंत आवश्यक है। वर्तमान समय में धर्म को लेकर जो आपसी वैमनस्य तथा मतभेद हमारे समक्ष उभर कर सामने आते हैं, इसका कारण धर्म को सही रूप में ना समझ पाना है।

## धर्म की अनिवार्यता–

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार धर्म कोई मत, सिद्धांत या बौद्धिक चिंतन मात्र नहीं है बल्कि यह मनुष्य के भीतर पहले से ही स्थापित दिव्यता की अभिव्यक्ति है। धर्म के प्रभाव का वर्णन करते हुए स्वामी विवेकाननद जी कहते हैं कि ''मानव जाति के भाग्य निर्माण में जितनी शक्तियों ने योगदान किया है और कर रही हैं, उन सब में धर्म के रूप में प्रगट होने वाली शक्ति से अधिक महत्वपूर्ण कोई नही है।''[1] समाज में निहित सभी व्यवस्थाओं में धर्म एक शक्ति के रूप में कार्य करता है। धर्म को लेकर जिस प्रकार की एकता लोगों में दिखाई देती है, उस प्रकार की एकता अन्यत्र कहीं नही दिखाई पड़ती है। जीवन के लिए धर्म की अनिवार्यता का विवरण विवेकानन्द अनेकों प्रकार से करते हैं। समाज में ऐसे भी विद्वान हैं जो यह दिखाने का प्रयास करते हैं कि बिना धर्म की ओर उन्मुख हुए भी जीवन सबल ढ़ंग से चल सकता है, किन्तु इसके उत्तर में स्वामी विवेकानन्द जी कहते हैं कि वे विद्वान जो धर्म की अनावश्यकता के लिए अपने उदाहरण देते हैं, वे धर्म के वास्तविक उदाहरण नही हैं, बल्कि धर्म की वाह्य अभिव्यक्तियां तथा कुछ आकस्मिक साहचर्य हैं। धर्म की वास्तविकता उच्चतर आकांक्षाओं में है, जो कि भौतिक आवश्यकताओं से ऊपर है। जब विवेकानन्द धर्म को जीवन के लिए आवश्यक बताते हैं तो उनका मन्तव्य उन उच्चतर आकांक्षाओं से है जो स्पष्टतः हर जीवन में अनिवार्यतः विद्यमान हैं। विवेकानन्द धर्म की अनिवार्यता का निर्देश करते हुए कहते हैं कि ''इसमें एक ऐसी विवशता है कि धर्म का पूर्ण परित्याग असंभव है। जहां–जहां धर्म के परित्याग पर सशक्त रूप में बल दिया गया है, वहां–वहां धर्म का परित्याग ही धर्म बन गया है।''[2] इस प्रकार यह ऐतिहासिक तथ्य है कि धर्म हर काल तथा हर संस्कृति में जीवित रहा है। धर्म को कभी नकारा नहीं जा सका है। धर्म के पतन का प्रयास करने वाली कितनी ही राजनीतिक और सामाजिक संस्थाओं का पतन हो चुका है। जब–जब धर्म को बिनष्ट करने की चेष्टा की गई, तब–तब धर्म किसी न किसी रूप में पुनर्स्थापित हो गया है। इस प्रकार धर्म की आवश्यकता स्पष्ट रूप में सिद्ध हो जाती है।

यहां पर एक प्रश्न का समाधान करना आवश्यक हो जाता है कि विवेकानन्द के अनुसार धर्म क्या है तथा उसका उद्भव किस प्रकार होता है? विवेकानन्द के अनुसार धर्म कर्मकांड, हठधर्मिता, मतवाद या अंधविश्वास नहीं है बल्कि धर्म मनुष्य के भसीतर निहित दिव्यता की अभिव्यक्ति है। धर्म केवल जानने का विषय नहीं बल्कि होने और बन जाने का विषय है। विवेकानन्द धर्म के उद्भव का मूल आधार इन्द्रिय सीमाओं के अतिक्रमण को स्वीकारते हैं। जब भी मनुष्य अपनी ऐन्द्रिक तथा सहज क्रियाओं से ऊपर उठने का प्रयास करता है तो इसी प्रयास में धर्म का उद्भव होता है। वैसे तो विवेकानन्द का मानना है कि धर्म की पूर्णतयः निश्चित परिभाषा नहीं दी जा सकती है। अब तक धर्म की जितनीइ भी परिभाषा विद्वानों ने दी है, वे असत्य तो नहीं किन्तु अपूर्ण जरूर हैं। अतः धर्म के स्वरूप को समझने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि किन क्रियाओं के रहने पर किसी क्रिया को धार्मिक कहा जा सकता है। प्रथमतः यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि धर्म के दो पक्ष होते हैं– वाह्य पक्ष और आन्तरिक पक्ष। इन दोनों ही पक्षों का अपने में विशिष्ट स्थान है, किन्तु वाह्य पक्ष की धार्मिकता तभी महत्वपूर्ण होती है जब वह आन्तरिक पक्ष के अनुकूल कार्य करे। अतः धर्म की विशिष्टता इसके आन्तरिक पक्ष में है। विवेकानंद कहते हैं कि ''धर्म के स्वरूप को समझने के लिए धार्मिकता को समझना आवश्यक है और धार्मिकता धर्मबोध है, धार्मिक चेतना है। यह वह विशेष प्रकार की आंतरिक अनुभूति है जिसकी हर प्रकार की अभिव्यक्ति धर्म का स्वरूप स्पष्ट करती है। अतः धर्म के स्वरूप को समझने का अर्थ इस अनुभूति का विश्लेषण है।''[3] विवेकानंद के इस विश्लेषण में उनकी मनोवैज्ञानिक दृष्टि की छाया मिलती है। धार्मिक चेतना या अनुभूति हर व्यक्ति में है। यहां तक की जो व्यक्ति स्वयं को नास्तिक कहते हैं, उनमें भी धार्मिकता विद्यमान होती है। विवेकानंद के अनुसार धर्म में तीन अंश ज्ञानात्मक क्रियात्मक तथा भावनात्मक विद्यमान होते हैं। जिस धर्म में जिस अंश की प्रधानता होती है, उस धर्म को उसी के अनुरूप चित्रित किया जाता है। इसके अतिरिक्त धार्मिकता की एक अनिवार्य विशेषता यह है कि उसमें दैविक तथा अति प्राकृतिक अंश विद्यमान रहते हैं। इसे किसी भी प्रकार के बौद्धिक चेतनाओं से अलग नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार धर्म केवल इंद्रियों की सीमाओं से ऊपर उठने का नाम ही नहीं है बल्कि इसका लक्ष्य बौद्धिक विवेचनों से भी ऊपर उठने का है। इसी कारण धर्म को इंद्रियातीत, अनुभवातीत तथा अति बौद्धिक भी कहा जाता है। विवेकानंद कई स्थलों पर धर्म का विवरण देते हुए कहते हैं कि धर्म का अर्थ आध्यात्मिकता को जागृत करना है या अपने अंतर में ईश्वरत्व को जगाना है।

## पारंपरिक अद्वैत तथा नव वेदांत–

विवेकानंद का नव वेदांत पारंपरिक शंकराचार्य के अद्वैत वेदांत से कई अर्थों में भिन्न है। शंकराचार्य जगत को माया या मिथ्या मानकर इसे त्यागने की बात करते हैं जबकि विवेकानंद जगत को वास्तविक मानते हैं और जगत में रहते हुए ही व्यक्ति को दिव्यता की अनुभूति करने के लिए प्रेरित करते हैं। शंकराचार्य का अद्वैत वेदांत जीवन का चरम लक्ष्य मोक्ष तथा संन्यास पर आधारित था तो वहीं विवेकानंद इसको व्यवहार में उतार कर आध्यात्मिक सत्यों को व्यक्तिगत जीवन और सामाजिक कल्याण के रूप में लागू करने की चेष्टा करते हैं। विवेकानंद का नव वेदांत विवेकानंद के धर्म दर्शन को वैश्विक स्तर पर प्रासंगिक बनता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि यह नव वेदांत किसी विशेष क्षेत्र संस्कृति तक सीमित न रहकर संपूर्ण मानव जाति की आध्यात्मिक एकता की बात करता है। शंकराचार्य का अद्वैत वेदांत सैद्धांतिक था जबकि

विवेकानंद का नव वेदांत व्यावहारिक है। विवेकानंद के अनुसार यदि सिद्धांतों को कार्य रूप में परिणत नहीं किया जा सकता तो बौद्धिक व्यायाम के अतिरिक्त उसका और कोई मूल्य नहीं है।

## शिकागो भाषण का प्रभाव और ऐतिहासिक महत्व–

विवेकानंद ने पश्चिम की धार्मिक श्रेष्ठता के अहम् को चुनौती देते हुए हिंदू धर्म को एक वैश्विक धर्म के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। विवेकानंद ने धर्म सभा के मंच से यह उद्घोष किया कि ''मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करता हूं, जिसने संसार को सहिष्णुता तथा सार्वभौम स्वीकृति दोनों की शिक्षा दी है। हम लोग सब धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते वरन् समस्त धर्मों को सच्चा मानकर स्वीकार करते हैं।''[4] उन्होंने गीता के श्लोक का उदाहरण दिया जिसमें यह कहा गया है कि ''जैसे विभिन्न नदियां भिन्न–भिन्न स्रोतों से निकलकर समुद्र में मिल जाती हैं, उसी प्रकार हे प्रभु! भिन्न–भिन्न रूचि के अनुसार विभिन्न टेढ़े–मेढ़े अथवा सीधे रास्ते से जाने वाले लोग अंत में तुझमें ही जाकर मिल जाते हैं।''[5] विवेकानंद ने सांप्रदायिकता, हठधर्मिता, धर्मान्धता आदि को सभ्यता के विनाश का कारण बताया और यह आशा व्यक्त की, कि यह धर्मसभा धर्मांधता का, तलवार या लेखनी के द्वारा होने वाली उत्पीड़नों का तथा एक ही लक्ष्य की ओर अग्रसर होने वाले मानवों की पारस्परिक कटुताओं का मृत्यु निनाद सिद्ध होगी। शिकागो में भाषण के उपरांत ही पश्चिम में वेदांत और योग के प्रति रूचि बढ़ी, जिससे आज के वैश्विक योग आंदोलन और अंतर धार्मिक संवाद की आधारशिला स्थापित हुई।

## सार्वभौमिक धर्म की संकल्पना–

विश्व में जैसे–जैसे विभिन्न धर्म का आविर्भाव हुआ वैसे–वैसे उन में अपनी विशेषता के अनुरूप भिन्न–भिन्न धार्मिक विश्वास के आयामों तथा भिन्न–भिन्न धार्मिक कर्म संबंधी आचरण एवं नियमों की स्थापना हुई। हर धर्म स्वयं को श्रेष्ठ समझते रहे हैं, इसी कारण इनमें आपसी संघर्ष एवं मतभेद भी उभरते रहे हैं। किंतु इतने मतभेदों के बावजूद भी धार्मिक संप्रदाय जीवित रहे और अपने को मजबूत बनाते रहे। स्वामी विवेकानंद का सार्वभौमिक धर्म किसी नए धर्म की स्थापना नहीं थी, बल्कि यह सभी विद्यमान धर्मों के अंतर्निहित सत्य को पहचानने की एक दृष्टि थी। उनका मानना था कि जो विभिन्न धर्मो के संघर्ष हैं, वह वस्तुतः ऊपरी संघर्ष हैं और वे उसके मूल को प्रभावित नहीं करते हैं। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि यदि धर्म का मूल प्रभावित हो गया तो वह धर्म शिथिल पड़ जाएगा और उसका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। विवेकानंद कहते हैं कि ''एक दृष्टि से संघर्ष, वैचारिक मतभेद एवं विवाद आदि तो प्रकृति के अनिवार्य सोपान हैं। यदि मतभेद हो ही नहीं, हर व्यक्ति एक ही विचार सोचे तो शीघ्र ही विचार बंधकर रुक जाएगा।''[6] विभिन्न धर्मो के मतभेद एवं विवाद धर्म के जीवन के लिए आवश्यक हैं। किंतु यहां एक प्रश्न यह भी उठ जाता है कि यदि विभिन्न प्रकार के मतभेद धर्म के लिए आवश्यक है तो धर्म सार्वभौम कैसे हो पाएगा? इसी प्रश्न के समाधान के विचार में विवेकानंद के सार्वभौम धर्म का स्वरूप उभरता है। धर्म की सर्वभौमिता के लिए दो लक्षणों का होना आवश्यक है। प्रथम, सार्वभौम धर्म तभी हो सकता है जब यह सभी के लिए खुला हो। कोई भी मनुष्य किसी धर्म को लेकर पैदा नहीं होता, बल्कि धर्म का चयन तो व्यक्ति के उन्मुक्त निर्णय पर आधारित होता है। सार्वभौम धर्म का दूसरा लक्षण यह है कि इसमें सभी संप्रदायों को संतुष्ट करने की क्षमता विद्यमान हो। धर्म में आपसी मतभेद तो रहेंगे ही किंतु सार्वभौम धर्म के लिए आवश्यक है कि इन मतभेदों से ऊपर उठते हुए सभी धर्म एवं संप्रदायों को साथ लेकर चलें। यहां एक प्रश्न यह भी उठ जाता है कि क्या इस प्रकार का सार्वभौम धर्म संभव है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए विवेकानंद कहते हैं कि ''ऐसे सार्वभौम धर्म की संभावना पर संशय करना या उसकी संभावना पर प्रश्न उठाना अकारण है क्योंकि 'ऐसा सार्वभौम धर्म वस्तुतः है'। उनका कहना है कि हम धर्म की वाह्यता में इतने उलझे हुए हैं तथा धर्म संबंधी विवादों तथा अपने धर्म की श्रेष्ठता को सिद्ध करने के प्रयत्नों में इतने खोए हुए हैं कि सार्वभौम धर्म की उपस्थिति से भी अनभिज्ञ बने हुए हैं।''[7] इस प्रकार हमें यह समझना आवश्यक है कि विभिन्न धर्मो के मूल में कोई विरोध नहीं है। सभी धर्म का केंद्र एक ही सत्य है और वह सत्य इतना व्यापक है कि उसके सभी पक्षों पर विचार नहीं किया जा सकता। सभी धर्म अपने–अपने पक्ष को ही सत्य समझ लेते हैं। इसी कारण मतभेद की स्थिति उत्पन्न होती है। सत्य को देखने के ढ़ंगों में जो भेद होता है, उसे हम सत्य का आधार नहीं बना सकते हैं। एक ही चित्र को दो ढंगों से देखने पर भिन्न–भिन्न चित्र उभरते हैं, किंतु इससे चित्र की वास्तविकता पर कोई विरोध नहीं होता। इसी दृष्टिभेद के कारण उस सत्य के भिन्न–भिन्न चित्र उभरते हैं, किंतु वस्तुतः हर धर्म में निरूपित सत्य एक ही है।

## सहिष्णुता और स्वीकार्यता–

आज के वैश्विक परिप्रेक्ष्य में विवेकानंद की सहिष्णुता के स्थान पर स्वीकार्यता की मांग अत्यंत प्रासंगिक है। सहिष्णुता में प्रायः एक प्रकार की भावना विद्यमान होती है। इसमें अन्य के प्रति एक दया का भाव विद्यमान होता है, जिससे अन्य की गरिमा का हनन होता है। वहीं दूसरी ओर स्वीकृति का अर्थ है, दूसरे के मार्ग को भी उतना ही सत्य मानना जितना अपना। यह विचार आज के वैश्विक समाज में शांति के लिए अत्यंत आवश्यक है।

## व्यावहारिक वेदांत और सामाजिक परिवर्तन–

विवेकानंद का सबसे महत्वपूर्ण योगदान व्यावहारिक वेदांत है। उन्होंने धर्म को अरण्यों और गुफाओं से निकालकर, व्यक्ति के जीवन में स्थापित करने का कार्य किया। उनके अनुसार वेदांत केवल आध्यात्मिक विमर्श तक ही सीमित नहीं है बल्कि सामाजिक न्याय और मानववाद का साधन है। विवेकानंद के अनुसार ''वेदांत आदर्श का उपदेश देता है और आदर्श वास्तविक की अपेक्षा कहीं अधिक उच्च होता है।''[8] प्राय जगत में ऐसा देखा जाता है कि लोग व्यवहार शब्द का प्रयोग उन्हीं कर्मों के लिए करते हैं, जिनकी ओर उनकी प्रवृत्ति होती है। किंतु यह व्यवहार का साधारण रूप हुआ जबकि वेदांत पूर्ण रूप से व्यवहार है। वह किसी अप्राप्य आदर्श को हमारे समक्ष नहीं रखता। वेदांत का सबसे बड़ा आदर्श है– 'तत्वमसि'। विवेकानंद के अनुसार मानव आत्मा शुद्ध स्वभाव तथा सर्वज्ञ है। आत्मा के संबंध में जन्म मृत्यु की कल्पना करना निरर्थक है। आत्मा जन्म मृत्यु के परे है। वेदांत मनुष्य को अपने ऊपर विश्वास करने के लिए प्रेरित करता है। जो अपनी आत्मा की दिव्यता में विश्वास नहीं करते, उन्हें वेदांत नास्तिक कहता है। विवेकानंद के अनुसार ''बहुत से लोगों के लिए यह एक भीषण विचार है, इसमें कोई संदेह नहीं, और हममें अधिकांश सोचते हैं कि यह कभी प्राप्त नहीं किया जा सकता, किंतु वेदांत दृढ़ रूप से कहता है कि प्रत्येक व्यक्ति इस सत्य का जीवन में प्रत्यक्ष कर सकता है।''[9]

## जीव ही शिव और दलित नारायण की सेवा–

विवेकानंद ने अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस के एक संदेश को जीवन के मंत्र के रूप में प्रेषित किया– 'शिव ज्ञाने जीव सेवा'। अर्थात प्रत्येक जीव को शिव मानकर उसकी सेवा करना। वेदांत कहता है कि ब्रह्म ही सत्य है जगत मिथ्या है तथा जीव और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है। अर्थात सभी मनुष्य में ब्रह्म का वास है या यह कहा जा सकता है कि सभी मनुष्य ब्रह्म ही हैं, तो असहायों की सेवा करना ब्रह्म की सेवा करने के बराबर है। इस प्रकार विवेकानंद गरीबों में ईश्वरत्व को स्थापित कर उनकी सेवा को सबसे बड़ी पूजा के रूप में मान्यता देते हैं। विवेकानंद के अनुसार सेवा कोई दान, दया, सहानुभूति नहीं है बल्कि यह मनुष्य का आध्यात्मिक सौभाग्य है कि उसे ईश्वर रूपी मनुष्य की सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ है। इस प्रकार विवेकानंद का दर्शन आधुनिक समाज के कल्याण का एक आध्यात्मिक आधार प्रदान करता है। यह दर्शन आज के वैश्विक सामाजिक संगठनों और मानवीय सहायता समूहों के लिए एक प्रेरणा का स्रोत है, जो सेवा को केवल संसाधनों के हस्तांतरण के रूप में नहीं, बल्कि मानवीय एकता के उत्सव के रूप में देखते हैं।

| सेवा का प्रकार | विवेकानन्द का दृष्टिकोण | आधुनिक सामाजिक कार्य के साथ संबंध |
|---|---|---|
| प्रेरणा | ईश्वर की दिव्यता का दर्शन | मानवीय गरिमा और अधिकारों के प्रति सम्मान |
| भाव | श्रद्धा और भक्ति | सशक्तिकरण और सहभागिता |
| प्रभाव | अहंकार का विनाश | सहानुभूति और सामुदायिक विकास |
| लक्ष्य | आत्मिक और भौतिक दोनों प्रकार की उन्नति | समग्र मानव विकास |

## विज्ञान और आध्यात्मिकता का समन्वय–

विवेकानंद उन आध्यात्मिक गुरुओं में से थे, जिन्होंने विज्ञान और आध्यात्मिकता को एक दूसरे का विरोधी नहीं बल्कि एक दूसरे का सहयोगी बताया। विवेकानंद के अनुसार ''धर्म तात्विक जगत के सत्यों से उसी प्रकार संबंधित है जिस प्रकार रसायन शास्त्र तथा दूसरे भौतिक विज्ञान भौतिक जगत से के सत्यों से। रसायन शास्त्र पढ़ने के लिए प्रकृति की पुस्तक पढ़ने की आवश्यकता है। धर्म की शिक्षा प्राप्त करने के लिए तुम्हारी पुस्तक अपनी बुद्धि तथा हृदय है।''[10] जिस प्रकार सभी विद्वानों की अपनी वैज्ञानिक पद्धतियां निर्धारित होती हैं, उसी प्रकार धर्म विज्ञान की पद्धति भी निर्धारित है और इसके पद्धतियों की संख्या, विषय सामग्री व्यापक होने के कारण अधिक है। धर्म का कोई एक स्वरूप निर्धारित नहीं किया जा सकता क्योंकि यह सभी के लिए उपयोगी नहीं सिद्ध होगा। विवेकानंद का आधुनिक विज्ञान के प्रति दृष्टिकोण उनके और प्रसिद्ध वैज्ञानिक निकोला टेस्ला के बीच हुए विचार विमर्श में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। 1895 के अंत में विवेकानंद की भेंट टेस्ला से हुई और उन्होंने उनके साथ 'आकाश' और 'प्राण' की वेदांतिक अवधारणाओं पर वार्तालाप किया। टेस्ला विवेकानंद के 'सांख्य दर्शन' और 'चक्र सिद्धांतों' से अत्यंत प्रभावित हुए। विवेकानंद को यह आशा थी कि गणितीय रूप से यह सिद्ध किया जा सकता है कि बल और पदार्थ अंततः ऊर्जा में परिवर्तित किए जा सकते हैं, जो वेदों के सिद्धांतों को आधुनिक विज्ञान के साथ पूरी तरह समायोजित करेगा, किंतु उस समय भौतिकी की अपनी सीमाएं थीं जो यह न कर सकी। यद्यपि टेस्ला ने अपने वैज्ञानिक कार्यों में 'आकाश' और 'प्राण' जैसे संस्कृत के शब्दों का प्रयोग करना शुरू कर दिया था, जो यह दर्शाता है कि विवेकानंद ने आधुनिक भौतिकी के वैज्ञानिक चिंतन को प्रभावित किया

था। इसी प्रकार जगदीश चंद्र बोस जैसे भारतीय वैज्ञानिकों पर भी विवेकानंद का प्रभाव पड़ा था। बोस ने पौधों और निर्जीव वस्तुओं में चेतना की खोज का कार्य किया था, जो कि अद्वैत वेदांत के सिद्धांतों से मेल खाते हैं। वेदांत यह घोषणा करता है कि संपूर्ण ब्रह्मांड एक ही चेतना से ओत–प्रोत है। विवेकानंद का विश्वास था कि भविष्य में विज्ञान और धर्म एक ही बिंदु पर मिलेंगे, जहां सत्य केवल अनुभवजन्य ही नहीं होगा बल्कि आध्यात्मिक भी होगा।

## सामाजिक सुधारः नारी शक्ति, शिक्षा और जातिवाद का विरोध–

स्वामी विवेकानंद का धर्म दर्शन आध्यात्म तक ही सीमित न होकर सामाजिक सुधारो से भी परिपूर्ण था। अपने धर्म दर्शन में विवेकानंद ने उन सभी कुरीतियों का विरोध किया, जो समाज के विकास में बाधक थीं। विवेकानंद ने नारी को शक्ति का अवतार माना तथा इस बात पर बल दिया कि किसी भी समाज की उन्नति, उस समाज की विकसित महिलाओं के द्वारा निर्धारित होती है। विवेकानंद ने भारतीय समाज में महिलाओं की निम्न स्थिति पर गहरा दुख व्यक्त किया और उनकी आत्मनिर्भरता के लिए प्रयास किया। उनका मानना था कि महिलाओं को सशक्त बनाया जाना चाहिए, जिससे कि वह अपनी समस्याओं का स्वयं समाधान कर सकें। उनके अनुसार स्त्रियां ईश्वर की प्रतिनिधि स्वरूप हैं और परिवार का केंद्र हैं। वे समाज का उच्चतम आदर्श हैं। इस प्रकार आज के वैश्विक लिंग समानता के आंदोलनों में विवेकानंद के विचार अत्यंत प्रासंगिक हैं।

विवेकानंद के दर्शन में शिक्षा का लक्ष्य मानव चरित्र का निर्माण करना है। उनका मानना था कि शिक्षा केवल सूचनाओं का संग्रह मात्र नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के चरित्र निर्माण, मानसिक शक्ति का विस्तार और बौद्धिक विकास का साधन है। जिससे व्यक्ति नैतिक दृष्टि से सुदृढ़ बन सके। विवेकानंद के अनुसार ''मनुष्य में ज्ञान का प्रसार केवल वही कर सकता है, जिसके पास देने को कुछ हो, क्योंकि शिक्षा देना केवल शाब्दिक व्यवहार नहीं है और ना ही यह अपने मतों को दूसरों के सम्मुख रखना है। यह तो अपनी आध्यात्मिक शक्ति को किसी दूसरे को देना है।''[11] विवेकानंद का शैक्षिक विचार वैश्विक संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण है। किसी राष्ट्र का विकास व्यक्ति के नैतिक चरित्र पर निर्भर करता है। यदि देश की बागडोर चरित्रवान व्यक्ति के हाथों में होगी, तो देश स्वतः ही प्रगति के पथ पर अग्रसर होता चला जाएगा।

## 21वीं सदी में वैश्विक प्रासंगिकता–

वर्तमान समय की वैश्विक समस्याएं जैसे पर्यावरणीय संकट, मानसिक तनाव और धार्मिक कट्टरता, विवेकानंद के दर्शन के प्रकाश में एक नवीन समाधान प्राप्त करती हैं। आधुनिक मनोविज्ञान में स्व– वास्तविकीकरण की जो परिभाषा अब्राहम मैस्लो ने दी है, वह विवेकानंद के आत्म साक्षात्कार के सिद्धांत के काफी निकट है। विवेकानंद का राजयोग मन के नियंत्रण और एकाग्रता की एक वैज्ञानिक विधि प्रदान करता है, जिसके द्वारा वर्तमान समय में मानसिक तनाव नामक बीमारी से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है और इस विधि को वैश्विक स्तर पर अपनाया भी जा रहा है। विवेकानंद के समय में आधुनिक पर्यावरणवाद जैसा कोई सिद्धांत नहीं था, किंतु उनके 'वसुधैव कुटुंबकम' के माध्यम से पर्यावरण की रक्षा का आह्वान किया जा सकता है। उनका मानना था कि ईश्वर हर कण में विद्यमान है तो इस आधार पर प्रकृति का शोषण करना स्वयं ईश्वर का निरादर करने के समान है। उनका यह विचार आज के जलवायु परिवर्तन को स्थिर रखने का एक प्रभावशाली आधार प्रस्तुत करता है। विवेकानंद का सार्वभौमिक धर्म, धार्मिक कट्टरपंथ के लिए एक प्रभावशाली हथियार है। उन्होंने मतभेदों का कारण बाहरी कर्मकांड को बताया है जबकि धर्म की मूल एकता सब में ही समान है। उनका यह विचार विश्व में शांति स्थापित करने के लिए एक उत्तम मार्ग प्रशस्त करता है।

| वैश्विक समस्या | विवेकानन्द का समाधान |
|---|---|
| धार्मिक आतंकवाद | सार्वभौमिक स्वीकार्यता और एक ही सत्य के अनेकों मार्ग का सिद्धांत |
| गरीबी और असमानता | दरिद्र नारायण की सेवा और सामाजिक जीवन पद्धति के रूप में न्याय |
| अवसाद और मानसिक तनाव | विभिन्न योगों के द्वारा आन्तरिक दिव्यता की अनुभूति |
| महिला उत्पीड़न | शक्ति की पूजा और आत्मनिर्भरता आधारित शिक्षा |

## निष्कर्ष–

स्वामी विवेकानंद के धर्म दर्शन को किसी निश्चित भौगोलिक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रखा जा सकता। वे ना केवल भारत के लिए, बल्कि संपूर्ण विश्व के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन करते हैं। उन्होंने धर्म को संकीर्णता के घेरे से मुक्त कर, उसे मानवता, विज्ञान और सेवा के व्यापक धरातल पर उतरने का प्रयास किया। विवेकानंद के धर्म दर्शन की प्रासंगिकता इस अर्थ में है कि उन्होंने मनुष्य को यंत्रवत जीवन से निकालकर केंद्र में स्थापित किया। उन्होंने मनुष्य को 'अमृत का पुत्र' कहा तथा उसे उसकी अनंत शक्ति का स्मरण कराया। आज के विश्व में वैज्ञानिक विकास चरम पर पहुंच गया है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता के इस दौर में मशीनों ने इंसानों को भी पीछे छोड़ दिया है, किंतु नैतिकता और सेवा की भावना मशीनों से नहीं आ सकती है। आज के इस क्रांतिकारी नवाचार में जहां एक देश से दूसरे देश की दूरी घट गई है, वहीं दो मनुष्यों के हृदय के बीच की दूरी बढ़ गई है। इस स्थिति में समस्त विश्व विवेकानंद के सार्वभौमिक भ्रातृत्व के संदेशों के माध्यम से ही वास्तविक शांति को प्राप्त कर सकता है। उनका उद्घोषणा 'उठो जागो और तब तक मत रुको जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए', आज भी वैश्विक युवा पीढ़ी को एक उद्देश्य पूर्ण और गौरवशाली जीवन जीने के लिए प्रेरित कर रहा है। विवेकानंद का धर्म दर्शन आने वाली शताब्दियों के लिए भी मानवता का प्रकाश स्तंभ बना रहेगा।

## संदर्भ ग्रंथ सूची–


1– स्वामी विवेकानन्द, ज्ञानयोग, साक्षी प्रकाशन, एस–16, नवीन शाहदरा, दिल्ली, 2023 पृ 7

2– बसन्त कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2016 पृ 48

3– बसन्त कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2016 पृ 50

4–स्वामी विवेकानन्द, विवेकानन्द साहित्य भाग–1, स्वामी तत्वविदानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2017 पृ 3

5– स्वामी विवेकानन्द, विवेकानन्द साहित्य भाग–1, स्वामी तत्वविदानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2017 पृ 4

6– बसन्त कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2016 पृ 55

7– बसन्त कुमार लाल, समकालीन भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2016 पृ 56

8– स्वामी विवेकानन्द, विवेकानन्द साहित्य भाग–8, स्वामी तत्वविदानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2017 पृ 5

9– स्वामी विवेकानन्द, विवेकानन्द साहित्य भाग–8, स्वामी तत्वविदानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2017 पृ 6

10– स्वामी विवेकानन्द, विवेकानन्द साहित्य भाग–2, स्वामी तत्वविदानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2017 पृ 25

11– विवेकानन्द, स्वामी, मेरे गुरूदेव,स्वामी भास्करेश्वरानन्द, श्री रामकृष्ण आश्रम, नागपुर, 1949, पृ 44